Krishi Kumbh
Online E-Magazine
Www.KrishiKumbh.Com

कृषि कुंभ

E-ISSN: 2582-9769

कृषि कुंभ
हिंदी मासिक पत्रिका

खण्ड 05 भाग 06, (नवंबर, 2025)
पृष्ठ संख्या 38–45

# जलवायु परिवर्तन के परिपेक्ष में टिकाऊ उत्पादन के लिए एकीकृत (समन्वित) रोग प्रबन्धन

**डॉ0 फूलचन्द**

वरीय वैज्ञानिक (पौधा रोग), निदेशालय, प्रसार शिक्षा डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, समस्तीपुर, पूसा, बिहार, भारत।

**Email Id:** – phoolchand@rpcau.ac.in

एकीकृत रोग प्रबन्धन खेती में पौधों की बीमारियों को प्रभावी ढंग से रोकथाम करने का एक बहुत ही महत्वपूर्ण उपाय है। यह उपाय प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने और दीर्घकालिक उत्पादकता सुनिश्चित करने के लिए एक समग्र और टिकाऊ पद्धति है। एकीकृत रोग प्रबन्धन में केवल रासायनिक दवाओं पर निर्भर रहने के बजाय, विभिन्न प्रकार के रोगों का प्रबन्धन के लिए अनेक उपायों का समावेश होता है। इसका लक्ष्य दीर्घकालिक समाधान सुनिश्चित करना होता है, जो कि मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए कम नुकसानदायक होता है और फसल प्रणाली को बेहतर बनाये रखें।

जलवायु परिवर्तन से होने वाली अनिश्चिताओं से निपटने के लिए एकीकृत रोग प्रबन्धन फसल उत्पादन में एक अहम भूमिका निभाती है। इस विधि को अपनाने से कीटनाशकों/फफूँदनाशकों के उपयोग में कमी आती है, परिणामस्वरूप किसानों की उत्पादन लागत कम होती है और मुनाफा ज्यादा होता है। इस पद्धति को अपनाकर किसान टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल तरीके से फसल उत्पादन कर सकते है, जो दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करता है।

एकीकृत रोग प्रबन्धन के अन्तर्गत चार मुख्य सिद्धांत जैसे बहिष्करण, उन्मूलन, सुरक्षा और उपचार आते है, जिसमें कल्चरल प्रबन्धन, प्रतिरोधी किस्में और जैविक नियन्त्रक जैसी कई विधियों का एकीकरण शामिल है।

**एकीकृत रोग प्रबन्धन के सिद्धांतः**

**1. बहिष्करण (Exclusion):-**

बहिष्करण सिद्धांत के अन्तर्गत निवेश द्रव्य का बहिष्करण किया जाता है। पौधों और उनके पदार्थों को किसी एक क्षेत्र या एक देश से दूसरे देश और देश के भीतर एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिना प्रतिबन्ध के लाने और ले जाने के परिणामस्वरूप अनेक पादप–रोगजनक जीवों का प्रसार हो जाता है। ऐसा जरूरी नहीं है कि सब विदेशी रोगजनक नई परिस्थितिक अवस्थाओं एवं जलवायु में जीवित ही बनी रहें, परन्तु उनमें से कुछ अपने को नये वातावनण के अनुकूल बना सकते है और उन क्षेत्रों की फसलों के लिए विनाशकारी सिद्ध हो सकते है। अतः रोगी पादप पदार्थों को उन क्षेत्रों में स्वतन्त्रतापूर्वक आयात–निर्यात पर प्रतिबन्ध लगाने की आवश्यकता होती है। निवेश द्रव्य का बहिष्करण पादप संध रोध के माध्यम से किया जाता है।

**2. पादप संग रोध (Plant Quarantine) :–**

नये क्षेत्रों से हानिकारक कीटो एवं बीमारियों से ग्रसित कृषि वस्तुओं के लाने, ले जाने या आयात–निर्यात पर वैज्ञानिक प्रतिबन्ध लगाने को पादप संगरोध कहते है। पादप संगरोध वह प्रक्रिया है जिसके तहत किसी देश में हानिकारक कीटों, बीमारियों और खरपतवारों के प्रवेश और प्रसार को रोकने के लिए पौधों की सामाग्री और अन्य सम्बन्धित वस्तुओं को प्रतिबन्धित और नियंत्रित किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि को खतरों से बचाना और देश की खाद्य आपूर्ति की सुरक्षा सुनिश्चित करना है। यह एक नियामक उपाय है जो अन्तरराष्ट्रीय व्यापार और आयातित पौधों पर लागू होता है। भारत में विनाशकारी कीट एवं

नाशीजीव अधिनियम 1914 में लागू हुआ और इस कानून के माध्यम से पादप संगरोध उपायों का लागू किया गया।

### 3. उन्मूलन (Eradication):-

जब कोई रोगजनक किसी नये क्षेत्र में संगरोध उपायों को अपनाने के बावजूद भी प्रवेश करके वहाँ स्थापित हो जाता है, तब उस रोगजनक को उस क्षेत्र से समाप्त करने के लिए उन्मूलन विधि अपनाने की जरूरत पड़ती है। रोगजनक के उन्मूलन का यह कार्य विभिन्न विधियों जैसे– फसल चक्र, सफाई, एकान्तर परपोषियों का उन्मूलन, परिशोधन कर्षण क्रियाएं, रोगजनक का जैव नियन्त्रण, भौतिक अथवा रासायनिक उपचारों आदि द्वारा किया जाता है। रसायनों द्वारा बीज उपचार, भूमि उपचार तथा कवकनाशों द्वारा पर्णीय छिड़काव या भुरकाव द्वारा किया जाता है। इसी प्रकार रोगजनक के उन्मूलन की भौतिक एवं जैव विधियों द्वारा भी किया जाता है।

**उन्मूलन की विधियॉः–**

1. **फसल चक्र (Crop rotation):-** परपोषी फसलों को अपरपोषी फसलों के साथ हेर–फेर कर बोने की क्रिया ही फसल–चक्र कहलाती है। यह विधि विशेष रूप से मृदोंढ़ रोगजनकों से उत्पन्न रोगों के नियन्त्रण के लिए किया जाता है जो कि अत्यन्त महत्वपूर्ण है। एक खेत में निरन्तर एक ही फसल लेते रहने के कारण रोगजनकों की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हो जाती है। अतः यदि ऐसे खेत में तीन या चार वर्षों तक ऐसी फसलों को बोया जाये, जिस पर रोगजनक का कोई प्रभाव न होता हो तो भूमि से रोगजनक के उन्मूलन में सहायता मिलती है।
2. **सफाई (Sanitation):-** सफाई एक बहुत ही सरल रोगनिरोधी विधि है, जिसका मुख्य उद्देश्य खेतों या गोदानों में अथवा पौधों पर उपस्थिति निवेश द्ष्य को नष्ट करना अथवा उसकी मात्रा को कम करना है, जिससे कि रोगजनक को अन्य स्वस्थ पौधों में फैलने से रोका जा सके। अतः खेत में पड़े रोगी पौधों के भागों अथवा उनके मलवे आदि को एकत्र करके नष्ट कर दिया जाये तो उन पर उपस्थित रोगजनक भी समाप्त हो जाता है और बाद में रोग भी उत्पन्न नही होता है। फसल की कटाई के तुरन्त बाद रोगी फसल के मलवे का जलाकर नष्ट कर दिया जाय तो इसके द्वारा जीवित रहने वाले निवेशद्ष्य की मात्रा भी बहुत घट जाती है। रोगी पौधों को खेतों से रोग की प्रारिम्भक अवस्था में ही उखाड़कर अथवा पौधों के रोगी भागों को हटा कर नष्ट कर देना रोगजनक को नष्ट या कम करके आगे फैलने से रोका जा सकता है। फसलो के वाइरस जनित रोगों के नियन्त्रण के लिए यह एक अत्यन्त उपयोगी विधि है। खेतों को खरपरवार से मुक्त रखना भी सफाई के अन्तर्गत आता है। खरपतवार के खेत मे अधिक होने से पौधो के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की कमी हो जाने के साथ मृदा का तापमान कम हो जाता है और आद्रता बढ़ जाती है, जिस कारण से पौधों के रागी होने की सम्भावना अधिक हो जाती है।
3. **एकान्तर परपोषियों का उन्मूलन (Eradication of Alternate Hosts):-** कुछ विनाशकारी रोग जैसे गेहूँ के किट्ट इत्यादि दीर्घ जीवन–चक्र वाले कवकों से उत्पन्न होते है। इनको अपने सम्पूर्ण जीवन–चक्र के लिए दो भिन्न–भिन्न परपोषी की आवश्यकता होती है। इनमें से एक मुख्य परपोषी फसल का पौधा तथा दूसरा जंगली झाड़ी अथवा अन्य जंगली पौधा होता है, जो एकान्तर परपोषी कहलाता है। यदि कम मूल्यवान पौधों अथवा इस एकान्तर परपोषी को नष्ट कर दिया जाये तो रोगजनक का जीवन चक्र पूरा नही हो सकेगा और इस तरह इन रोगों को भी नियान्वित किया जा सकता है।

### 4. सुरक्षा और उपचार द्वारा रोग नियन्त्रण (Disease control though Protection):-

इस विधि के अन्तर्गत निम्नलिखित पादप रोग नियन्त्रण है जो निम्न प्रकार हैः–

1. **रासायनिक पादप रक्षणः–** रासायनिक पादप रक्षण के अन्तर्गत मुख्य रूप से उन्मूलन (Eradication), सर्वांगी रक्षण (Systemic

Protection) और सतह रक्षण (Surface Protection) आते है।

- **उन्मूलन (Eradication) :–** उन्मूलन के अन्तर्गत सतह उन्मूलन (Surface Eradication) और सतह धूमन (Surface Fumigation) आते है।
- **सर्वांगी रक्षण (Systemic Protection) :– सर्वांगी रक्षण के अन्तर्गत** रासायनिक रोग निरोधक (Chemical Prophylaxis) और रसायन चिकित्सा (Chemotherapy) आते है।
- **सतह** रक्षण **(Surface Protection) :– सतह** रक्षण **के अन्तर्गत मुख्य रूप से तीन विधियॉ जैसे** पर्णीय रक्षण (Foliage Protection),बीज रक्षण. Seed Protection) और फल रक्षण (Fruit Protection) से पादप रोगो का नियंत्रण किया जाता है।

2. **रसायन चिकित्सा (Chemotherapy):– रसायन चिकित्सा में पादप रोगो का नियंत्रण** पोषणिक (Nutritional) , परजीवी रोधी (Antiparasite) और रोगजनक रोधी (Antipathogenic) के द्वारा किया जाता है।

➢ **रसायनों से पादप रोग नियन्त्रण की विधियाँ :–**

1. **रक्षक छिड़काव (Protective Spraying) :-** रक्षक छिड़काव का मुख्य उद्देश्य होता है कि रोगजनक के पौधे की सतह पर पहुँचन से पूर्व ही एक रक्षक आवरण पैदा करना है।
2. **बुरकाव (Dusting) :-** बुरकाव नम मौसम में ही किया जाता है जिससे रसायन परपोषी की सतह पर सरलता से चिपक जाय। कवकनाशी एवं जीवणुनाशी बुरकाव की अपेक्षा छिड़काव के रूप में अधिक प्रभावी होते है।
3. **बीज उपचार (Seed Treatment) :-** कवकनाशी के द्वारा बीजों का उपचार बहुत आवश्यक है। क्योंकि अनेक रोग उत्पन्न करने वाले कवक एवं जीवाणु बीज की सतह पर अथवा इसके भीतर उपस्थित होते हैं, और जब इन बीजों को बोया जाता है, तब यह बीज के अंकुरण के समय क्रियाशील हो जाते है और बीज एवं बीजाकुंर को मार देते है, अथवा बाद की अवस्था में रोग उत्पन्न करते है। बीज उपचार से बीजों के अंकुरण के समय मृदा में रहने वाले अनेक रोगजनकों से भी रक्षा करता है
4. **मृदा उपचार (Soil Treatment) :-** मृदा अनेक प्रकार पादप रोगजनकों को आश्रय देती है, जो भूमजनित बीमारियो के उत्पन्न होने में सहायक होती है। यदि मृदा से इन रोगजनकों को समाप्त कर दिया जाय तो अनेक भूमिजनित रोगों को नियन्त्रि करने में मदद मिलती है। रासायनिक मृदा उपचार अनेक विधियों द्वारा किया जाता है जो निम्न प्रकार है:–

➢ **रासायनिक मृदोपचार निम्न विधियों के द्वारा किया जा सकता है:–**

1. **कवकनाशी रसायन का घोल बनाकर :–** इस विधि का प्रयोग बीजविगलन, मूलविगलन इत्यादि रोगो को नियन्त्रित करने के लिए किया जाता है तथा इसको बीज बोने से पहले अथवा बाद में किया जा सकता है।
2. **बुकनी अथवा दानों का बिखेरण** :– इस विधि में कवकनाशियों को मिट्टी अथवा उर्वरकों के साथ मिलाकर जमीन पर बिखेर दिया जाता है और उसके बाद हल्की जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाता है।
3. **खूड़ (Furrow) में डालना** :–. इस विधि में कवकनाशी का प्रयोग रोपड़ के समय बुकनी या दानों के रूप में अथवा जल में घोलकर खूड़ में किया जाता है। यह विधि उन रोगों के नियन्त्रण के लिए किया जाता है, जो रोग पौधे के आधार पर उत्पन्न होते है।
4. **मृदा धूमन (Soil Fumigation) :-** यह विधि मुख्य रूप से पादप परजीवी

निमैटोड एवं कवको के नियन्त्रण करने के लिए किया जाता है। इस कार्य के लिए जो रसायन प्रयोग में लाये जाते है, वह सामान्य रूप से वाष्पशील (Volatile) होते है।

5. **कन्द, शलकन्द एवं पौधो के अन्य भागों का उपचार :–.** यह विधि आलू के स्कैब ;बंइद्ध एवं काली रूसी ;ठसंबा बतनद्धि, ग्लेडिओलस शकरकंदों, अदरक के प्रकंद विगलन ;तैप्रवतउमतंजद्ध और गन्ने की पोरियां का उपचार के लिए की जाती है।

6. **फलों एवं सब्जियों के भण्डारगत रोगों का नियन्त्रण :–** फलों एवं सब्जियों के रोगजनक का संक्रमण कटाई के पहले अथवा बाद में होने की संभावना रहती है। सेब ,नारंगी, अंगूर फलों एवं सब्जियों के भण्डारगत रोग ,नीबू जाति के फलों के क्षय रोग, आडू के राइजोपस विगलन, स्ट्राबेरी, तरबूज इत्यादि का स्टोरेज विगलन रोगों के नियन्त्रण के लिए किया जा सकता है।

7. **वृक्ष–घावों या क्षतों का उपचार अथवा वृक्ष–शल्य चिकित्सा (Treatment of Tree Wounds or Tree-Surgery)** :– वृक्षों के तनों एवं शाखाओं कीछाल पर काट–छाँट करते समय अथवा तेज वायु एवं तुफान से दुर्घटनावश बने घावों अथवा कवकों, जीवाणुओं इत्यादि के संक्रमणों को हटाने के लिए की गई काट–छाँट द्वारा बने घावों को सूखने एवं दुबारा रोगजनकों के आक्रमण से बचाने की आवश्यकता होती है। पहले लकड़ी के खुले भाग 0.5 से 1.0 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइट अथवा 70 प्रतिशत एथाइल एल्कोहल अथवा 1:1000 मरक्यूरिक क्लोराइड घोल द्वारा स्टरलाइजड कर लेते है। अन्त में सम्पूर्ण घाव पर किसी स्थाई वृक्ष क्षत ड्रेंसिंग जैसे लेनोलिन रोजिन एवं गोंद का मिश्रण ;10रू2रू2द्ध या वोडो पेस्ट, अथवा चौपटिया पेस्ट इत्यादि का लेप कर दिया जाता है।

8. **रोगवाहक का नियन्त्रण** :– पौधों के अधिकांश वाइरस जनित रोगों का प्रसार मुख्य रूप से कीटों द्वारा होता है। अतः रोगवाहक कीटो को कीटनाशी के द्वारा वाइरस रोगों के प्रसार को रोका जा सकता है।

9. **गोदामों का विग्रसन (Disinfestation of warehouse) :–** यह विधि संग्रह किये जाने वाले पदार्थों को गोदामों में पिछले वर्ष छूटे हुए रोगजनकों के संक्रमण से बचाने के लिए सर्वप्रथम गोदामों की भलीभाँति सफाई करनी चाहिए, उसके बाद गोदाम की दीवारों एवं फर्स को कापर सल्फेट घोल 1 मिली प्रति लीटर अथवा फार्मलाडिहाइड के 1:240 छिड़काव करें। गोदामों को क्लोरोपिक्रीन अश्रु गैस अथवा गन्धक को जलाकर भी धूमित किया जा सकता है।

## 5. कल्चरल प्रबंधन :–

**रूपान्तरित कृषि अथवा कर्षण क्रियायें (Modified Agricultural or cultrural Practices)**:– रूपान्तरित कृषि अथवा कर्षण क्रियायें को अपनाकर पादप रोगो के नियंत्रण को सफलतापूर्वक किया जा सकता है। कर्षण क्रियाये जो रोगजनक को प्रभावित करती है, निम्नलिखित है:–

(क) **मिश्रित खेती (Mixed Cropping):-** कुछ फसलें जैसे जौ–गेहूँ, गेहूँ–चना, कपास–मोठ एवं अरहर–ज्वार इत्यादि को एक साथ मिलाकर बोने से रोगों द्वारा होने वाला आर्थिक क्षति कम हो सकती है, क्योंकि एक ही रोगजनक द्वारा एक साथ मिलाकर बोयी गई दोनों फसलों पर आक्रमण नहीं कर सकता। इस प्रकार यदि किसी रोग द्वारा एक फसल नष्ट भी हो जाती है तो दूसरी फसल बच सकती है।

(ख) **अति संकुलता में न बोना (Avoid over Crowding):-** जहाँ तक सम्भव हो पौधों को अति संकुलता में बुआई न करे। यदि ऐसा करते है तो अधिक घना होने पर पौधों अर्द्रता सदैव बढ़ जाती है, तापमान

कम हो जाता है और वातनएवंम् प्रकाश की भी कमी हो जाती है। परिणामस्वरूप अनेक रोगजनकों की वृद्धि शीघ्रता से होती है।

(ग) **रोपन अथवा बोने के समय का परिवर्तन (Alternation of date of Planting or sowing):-** यदि रोपण अथवा बोने के समय में इस प्रकार परिवर्तन किया जाये कि पौधे की रोग–ग्राही अवस्था का मेल रोगजनक के अनुकूल पर्यावरण से न हो पाये, जिससे कि पौधा इनके आक्रमण से बच जाये और अधिक हानि न हों।

(घ) **.उचित सिंचाई (Proper Irrigation):-** फसलों में सामान्य सिंचाई का उद्देश्य केवल मृदा को एक सीमा तक गीला करना है, जिससे पौधों की जड़े, जल एवं पोषक तत्वों को सुगमता से ग्रहण कर लें। यदि मृदा में जल अधिक मात्रा में दिया जाता है तो जड़ों की श्वसन क्रिया रूक जाती है तथा जड़ों एवं तनों के आधार के चारों ओर अनेक विलयकारी लवणों का संचय विषैली मात्रा में हो जाता है, जिससे जड़ों में रोग उत्पन्न होने के अवसर बढ़ जाते है।

(ड.) **ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई (Summer deep ploughing) :-** गर्मी के दिनों में खेत की गहरी जुताई करके खुला छोड़ देने से मृदा में उपस्थित कवकों के बीजाणु, कवकजाल एवं निमैटोड के अण्डे, डिम्भक इत्यादि कड़ी धूप में नष्ट हो जाते है। यह भूमिजनित रोगाणुओ से होने वाली बीमारियों के रोकथाम का उत्तम उपाय है।

(च) **बोने की विधि (Method of Sowing):-** कुछ रोग जैसे– गेहूँ का बंट एवं शीर्ष कंड आदि बीजों को अधिक गहराई में बोने से उत्पन्न होते है। अतः ऐसे रोगों के आक्रमण से बचने के लिए बीज को उपयुक्त गहराई में ही बोना चाहिए।

(छ) **ऊँची मेड़ बांधना (High Ridging):-** आलू के पौधों की जड़ों पर 10 से 15 सेमी॰ ऊँची मिट्टी चढ़ाने से कंदों पर पिछेती अंगमारी रोग के संक्रमण की सम्भावना कम हो जाती है।

(ज) **स्वस्थ बीज का चयन (Selection of Healthy Seed):-** रोगों के नियन्त्रण का यह एक शुद्ध निरोधी अपाय है। फसलों में अनेक रोग केवल बीज अथवा दूसरे प्रवर्धन अंगों जैसे–कंद, प्रकंद, शल्ककंद, कलम इत्यादि द्वारा उत्पन्न होते है। बीजोंढ़ रोगों का नियन्त्रण रोग मुक्त बीजों का उचित चयन करके सरलता से किया जा सकता है।

(झ) **उचित उर्वरीकरण (Proper Fertilization):-** नत्रैजनीय उर्वरकों के अधिक प्रयोग से आलू की पिछेती अंगकारी, धान की सहसामारी एवं गेंहूँ के किट्ट रोगों का फसल पर अधिक प्रकोप होता है। जबकि पोटाश की पर्याप्त मात्रा के साथ संतुलित–उर्वरकों के प्रयोग से पौधों में रोगरोधिकता बढ़ जाती है। अत– पौधों का उचित उर्वरक ैप्रबन्धन करके रोंगों को कुछ सीमा तक रोका जा सकता है।

(ञ) **मृदा का कार्बनिक संशोधन (Organic Amendmant of Soil):-** मृदा संशोधन के रूप में विभिन्न पदार्थ जैसे–हरी खाद, शुष्क अथवा हरे पौध अवशेष, बुरादा, लकड़ी का छीलन इत्यादि को प्रयोग किया जाता है। मृदा में इन कार्बनिक पदार्थों के अपघटन (Decompositon) से मृदा की भौतिकी, रासायनिक, एवम् जीवीय अवस्थाओं (biotic conditions) के परिवर्ततन में सहायता मिलती है। मृदा में यह परिवर्तित अवस्थाओं रोगजनक के निवेशद्ष्य विभव ;पदवबनसनउ चवजमदजपंसद्ध या निवेशद्ष्य सघनता एवं निवेशद्ष्य क्षमता को घटाने में सहायता करती है।

(ट).**भूमि अभिक्रिया का समायोजन (Adjustment of Soil Reaction):-** इस विधि के अन्तर्गत मृदा में चूना अथवा गंधक का प्रयोग किया जाता है। जिससे कि मृदा पी–एच मान का परिवर्तन हो जाता है और इसका रोगजनकों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

(ठ) **फसल की कटाई के समय का समायोजन (Adjustment of Harvesting Time) :-**

शीतोष्ण जलवायु में दाने वाली फसलों की देर से कटाई करने पर रोगजनकों द्वारा बीजों में कान्टैमिनेशन करने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। जब आलू के कन्दों की खुदाई पौधों के ऊपरी भागों के हरे रहने पर ही की जाती है तो पत्तियों पर उपस्थिति पिछेती अंगकारी के कवक द्वारा कंदों में सुगमता से संक्रमण किया जा सकता है। इसे रोकने के लिए कंदों की खुदाई से पहले पौधों के ऊपरी भागों को काटकर सुखा देना चाहिए। ऐसा करने से पिछेती अंगकारी कवक की बीजाणुधानियाँ पर रक्षण की जाती है और संक्रमण से बच जाते है।

## 6. भौतिक विधियों द्वारा पादप रोग नियन्त्रण :–.

1. **ऊष्मा उपचार द्वारा रोग नियन्त्रण (Heat Treatment) :–** मृदा अथवा परपोषी पौधों या उनके अपशिष्ट अंगों में रोग नियन्त्रण की उष्मा उपचार विधि निम्न प्रकार है:–
2. **उष्मा द्वारा मृदा निर्जलीकरण (Soil sterilization by Heat) :–.** पौध घरों (Green House) एवं कभी–कभी सीड बेड्स में मृदा निर्जलीकरण उष्मा द्वारा किया जाता है जो भाप अथवा उष्ण जल (Hot Water) के रूप में होती है। मृदा निर्जलीकरण लगभग 30 मिनट तक $80^0$C या इससे अधिक तापक्रम पर करते है। इस तापमान पर मृदा के समस्त रोगजनक मर जाते है।
3. **बीजों एवं अन्य अंगों का उष्म जल उपचार (Heat Water Treatment of Seeds an other propagtive organs) :–**यह उपचार उस रोगजनक को मारने के लिए किया जाता है जो बीजावरण या शल्क (Scales) आदि के भीतर उपस्थिति होते है जैसे गेहूँ और जौ का अनावृत कंड, जौ का धारी रोग इत्यादि। इस विधि के अनुसार बीज को 4 घन्टे तक ठंडे पानी में भिगोना चाहिए। ऐसा करने से बीज के भीतर का प्रसुप्त कवकजाल क्रियाशील हो जाता है। इसके बाद बीजों को पानी में $49^0$C तापक्रम पर 2 मिनट तक दुबोकर रखना चाहिए और अन्त में बीजों को बोने से पहले सुखा लिया जाता है। गन्ने के लाल सड़न (Redrot) के लिए $50^0$C पर 2 घन्टे लिए पोरियों का रखा जाता है, धान की जीवाणु अंगकारी के लिए बीजों को $52^0$ C तापमान पर 30 मिनट के लिए उष्ण जल उपचार किया जाता है।
4. **आतप उष्मा उपचार (Solar Heat Treatment) :–** उष्मा जल उपचार विधि की अपेक्षाकृत यह विधि किसानों के लिए काफी आसान विधि है। इस विधि में बीजों को गर्मी के दिनों में (मई के अन्तिम सप्ताह अथवा जून के प्रथम सप्ताह में) चार घन्टे तक (प्रातः 8 बजे से दोपहर 12 बजे तक) ठंडे जल में भिगोया जाता है, और इसके बाद बीजों को 7 घन्टे तक (दोपहर 12 बजे से सायं 7 बजे तक) धूप में पतली तह में पक्के सीमेंट के फर्स पर बिछा कर सुखाया जाता है।
5. **संग्रह अंगों का उष्म–वात उपचार (Hot Air Treatment of Storage Organs) :–** कुछ संग्रह अंगों जैसे शकरकन्द को यदि $28^0$ C – $32^0$ C पर दो सप्ताह तक रखा जाता है तो उनके घावों को भरने में सहायता मिलती है और राइजोपस एवं मृदु विगलन जीवाणुओं द्वारा होने वाले संक्रमण की रोकथाम की जा सकती है।
6. **उष्मा द्वारा पौधों से वाइरसों का विलोपन (Elimination of viruses from Plants by Heat) :–.** पौधों के वाइरस रोगों के नियन्त्रण के लिए उष्मा उपचार एक सफल और व्यापक रूप से प्रयोग की जाने वली चिकित्सीय विधि (Therapeutic Method) है। प्रसुप्त पादप पदार्थों जैसे कन्द, कालिकयुक्त टहनी (Bud Wood) एवं प्रसुप्त वृक्षों (Dorment Trees) इत्यादि को सामान्य रूप से उष्ण जल द्वारा $35^0$C - $54^0$C तापमान पर कुछ मिनट से लेकर कई घन्टों तक उपचारित किया जाता है। गन्ने में वाइरस से उत्पन्न पेड़ी वृद्धि रोग (Ratoon Stunting) एवं माइकोप्लाज्मा

सदृश जीवों से उत्पन्न घासी प्ररोह (Grassy Shoot) रोगों को उष्म–वात उपचार द्वारा सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है। गन्नों को एक वायुरूद्ध कक्ष में $54^0$ उष्ण–वात (Hot Air) पर 8 घन्टे तक रखने से वाइरस एवं माइकोप्लाज्मा सदृश जीव निष्क्रिय हो जाते है।

7. **प्रशीतन द्वारा रोग नियन्त्रण (Disease control by Refrigeration)** :–. प्रायः प्रशीतन मांशल पदाप पदार्थों (Slashy Plant Products) में कटाई के पश्चात् उत्पन्न होने वाले रोगों के नियन्त्रित करने के लिए किया जाता है। ऐसे फलों एवं सब्जियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रशीतनयुक्त वाहनों (Refrigerated Vehicles) द्वारा ही ले जाया जाता है तथा इनका उस समय तक प्रशीतन किया जाता है जब तक इनको उपभोक्ता द्वारा उपभोग नहीं कर लिया जाता है।
8. **विकिरण द्वारा रोग नियन्त्रण (Disease Control by Radiation) :-** विभिन्न प्रकार के विद्युत चुम्बकीय विकिरणों (Electromagnetic Radition) जैसे पराबैंगनी प्रकाश (Ultraviolet Light) एक्स किरणें (X-Ray) वाई किरणें (Y-Ray) के साथ–साथ कुछ अणु विकिरण (Particulate Radiations) जैसे α कण (α Paticles) एवं β कण (β Paticles) का उपयोग रोग नियन्त्रण के लिए किया जाता है। आडू, टमाटर, स्ट्राबेरी इत्यादि में कटाई के बाद कवक रोगजनको द्वारा होने वाले संक्रमणों की रोकथाम इस विधि से किया जाता है।

## (6) प्रतिराधी किस्में और जैविक नियन्त्रणः–

**(A) रोगरोद्यिता द्वारा रोग नियन्त्रण (Disease control through Disease Resistance) :** फसलों के रोग नियन्त्रण उपायों में सबसे अधिक महत्व रोगरोधी किस्मों के प्रयोग को दिया जाता है पौधों में वाइरस एवं संवहनी रोगजनकों ;टेंबनसंत च्जीवहवदेद्ध से उत्पन्न रोगों को अन्य विधियों द्वारा नियान्वित करना कठिन होता है, परन्तु यह रोगरोधी किस्मों के प्रयोग द्वारा सरलता से नियान्वित किये जा सकते है। इसके अतिरिक्त कुछ रोग जैसे धान्य किट्ट, मूल विगलन इत्यादि का नियन्त्रण पूर्ण रूप से किया जा सकता है।

**पौधों में रोग–रोधिता की प्रकृति (Nature of Disease Resistance in Plants) :** रोग–रोधिता को निम्न तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।

1. **रोगपलायन (Disease escape) :–** रोग पलायन पौधों की वह योग्यता है जिसमें वह रोगजनक के आक्रमण से कुछ वंशागत अथवा पर्यावरण अवस्थाओं जैसे तीव्र वृद्धि, शीघ्र पकना बोने के समय अथवा वृद्धि के समय में परिवर्तन या बोने की विधि में परिवर्तन इत्यादि द्वारा अपना बचाव करते है। जैसे मूँगफली की अगेती पकने वाली किस्म में टिक्का रोग उत्पन्न नहीं होता है और गेहूँ की अगेती किस्म किट्ट रोग के आक्रमण से उन क्षेत्रों में बच जाती है जहा इनका उग्र आक्रमण वर्धन समय (growing season) के अन्त में होता है।
2. **रोग सहनशीता (Disease Tolerance) :-** रोग सहनशीलता पौधों की वह योग्यता है, जिसमें पौधे एक रोगजनक के आक्रमण को बिना क्षति और लक्षणों को दिखाये बिना सहन करते है। पोटाश और फॉस्फेटी खादों के प्रयोग से पौधों में सहनशीलता बढ़ जाती है। गेहूँ की फसल का किट्ट और आसिता रोग और धान की फसल का सहसाकारी रोग में पोटाश उर्वरक के प्रयोग से पौधों में संक्रमण की सहन करने की शक्ति पायी गयी है।
3. **ययार्थ या वास्तविक रोगरोधित (True Resistance) :-** परपोषी पौधों में रोग के प्रवेश अथवा उसके बाद में होने वाली वृद्धि और स्थापना को रोनक की योग्यता ही रोगरोधिता कहलाती है। पौधों में रोगरोधिता होने से रोगजनक

अथवा परजीवी द्वारा कोई हानि नहीं होती।

**(B) जैविक विधियों द्वारा पादप रोग नियन्त्रण (Plant Disease control by Biological Methods)** :- कोई भी अवस्था जिसके अर्न्तगत अथवा जिसका प्रयोग करने से एक रोगजनक के जीवित बने रहने अथवा उसकी क्रियाशीलता को किसी दूसरे जीव द्वारा कम कर दिया जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप उस रोगजनक स उत्पन्न रोग में कमी हो जाती है। इसके अर्न्तगत निम्नालिखित विधियाँ आती हैः–

1. **अन्योन्य प्रतिरोध एवं अवरोध (Cross Protection and Interference) :-** यह वह प्रक्रिया है, जिसके किसी एक वाइरस के भेद विभेद ;डपसक ैजतंपदद्ध से संक्रमित पौधे के उत्तक अभी वाइरस के अन्य दूसरे विभेदों के द्वारा संक्रमित होने से सुरक्षित बच जाते है। अन्योन्य प्रतिरोध अन्तर्गत उदाहरण के रूप में यदि नाशपाती की दग्ध अंगकारी ;थ्पतम ठसपहीजद्ध में एक अरोग जनक जीवाणु ;छवद. च्ंजीवहमदपब ठंबजमतपंद्ध को निवेशित किया जाता है तो इस रोग को उत्पन्न करने वाले जीवाणु एकिंनिया का संक्रमण रूक जाता है।

2. **परात्परजीविता (Hyperparasition) :-** इसके अन्तर्गत निम्न मुख्य स्थितियाँ आती हैः–

   i. **जीवाणुभेजी अथवा जीवाणुज वाइरस (Bacteriaphages or Bactorial Viruses) :-** प्रकृति के अनेक जीवाणुभोजी बहुत से पादप रोगजनक जीवाणुओं को समाप्त करने के लिए अपस्थिति होते है। अनेक जीवाणुज रोगों जैसे–एग्रोवैक्टीयम ट्यूमीफेशिएन्स द्वारा उत्पन्न शिखरपिटिका, स्यूडोमोनास सोलेनेसिएरम द्वारा उत्पन्न सौलेनेसी पौधों की जीवाणु म्लानि, एर्विनिया एमीलोवोरा द्वारा उत्पन्न नाशपाती की दग्ध अंगकारी इत्यादि को जीवाणुभोजी द्वारा सफलतापूर्वक नियन्त्रण किया जा सकता है।

   ii. **कवकपरजीविता (Mycoparasitism) :-** प्रकृति के कुछ रोग जैसे चूर्णित आसिता, किट्ट एवं अर्गट इत्यादि को उत्पन्न करने वाले कवकों पर कुछ दूसरे अरोगजनक कवक जैसे एम्पेलोमाइसेज, डारल्यूका, सेरेबैलम इत्यादि आक्रमण करते है। परन्तु इन कवकों के प्रयोग द्वारा इन रोगों का व्यवहारिक नियन्त्रण नहीं हो सकता है।

   iii. **निमेटोड के परजीवी (Parasites of Nematodes) :-** पादप परजीवी निमेटोड पर अनेक मृदा निवासी कवक, प्रोटोजोआ और सम्भवतः जीवाणु एवं वाइरस, परजीवी रूप में रहते है। मृदा में अनेक परभक्षी जैसे कुछ प्रोटोजोआ, कवक, दूसरे मिमैटोड एवं सूक्ष्म संधि पाद प्राणि इत्यादि पादप परजीवी मिमैटोड पर आक्रमण करके उनको नष्ट कर देते है।

   iv. **पाश या विचली फसलों एवं विरोधी पौधों द्वारा रोग नियन्त्रण:-** कुछ पौधे जो स्वयं पादप परजीवी निमाटोड के लिए रोगग्राही नही होते है, ऐसे श्राव निकालने है, जो निमाटोड के अंडे फूटने की क्रिया को उत्तेजित कर देते है। निमाटोड के डिम्भक इन पौधों में प्रवेश करते है, परन्तु वह प्रौढ़ के रूप में विकसित नहीं हो पाते हैं तथा अण्डे देने में भी असमर्थ रहते है और अन्त में मर जाते है। इस प्रकार के अरोगग्राही पौधो को पाश या विचली फसलों के नाम से जातना जाता है। फसल चक्र कार्यक्रम में पाा फसलों का प्रयोग करके मृदा में निमाटोड की संख्या को बहुत कम किया जा सकता है।

   **उदाहरण–** हेक्रेोडेरा शैक्टाई निमैटोड के लिए रोगग्राही फसल को खेत में बोने से पहले तोरिया फसल को अधिक बीज की दर से बोया जात है तो निमाटोड से होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।